भारतीय इतिहास और संस्कृति के सूत्र

प्राचीन भारतीय इतिहास और संस्कृति विषय की शुरूआत करने से पहले ही हमारे समक्ष विभिन्न प्रश्न उपस्थित होते है क्योकि प्राचीन शब्द समय की भूतकालीन सीमा की कोई तिथि निर्धारित नही करता, यहां तक कि इसमें वह समय भी शामिल है जिस समय भारत देश नाम की संज्ञा की उत्पत्ति भी नहीं हुई थी।

इसे समझने के लिये यह आवश्यक है कि हम पूरे भारतीय इतिहास और उसकी संस्कृति के मूल तत्वो की खोज कर उन पर एक विहंगम दृष्टि डालें जिससे हमें यह निर्धारित करने में सुविधा होती है कि आज जो भारत का स्वरूप उसका समाज व भारतीय इतिहास की जो व्याख्या हमारे समक्ष उपस्थित हुई है उसके मौलिक तत्व क्या है साथ ही यह भी की प्राचीन समय से लेकर अब तक हुये सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास के कारक क्या रहे है आज उनका जो स्वरूप मिलता है वह इसी रूप में और ऐसा ही क्यो है

निःसन्देह यह स्वयं सिद्ध है कि होने वाला परिवर्तन और विकास परिस्थिति के अनुरूप होता है और उसमें कार्य–कारण का सम्बन्ध होता है। मोटे तौर पर भारतीय इतिहास के सन्दर्भ में विचारोपरान्त यह पता चलता है कि भारतीय इतिहास विदेशी आक्रमणों, प्रतिरोध, सम्मिलन और समन्वय का लगातार चलने वाला क्रम है। इसी प्रकार से यहां की संस्कृति भी विभिन्न भाषा–भाषी समूहो, धर्मो, पन्थो और विचारो के मेल से संगठित हुई है।

निःसन्देह भारतीय इतिहास और संस्कृति के इस स्वरूप को विकसित होने में कुछ ऐसा परिघटित हुआ है कि फलस्वरूप यहां की भौगोलिक, नृवंशीय और सामाजिक परिस्थितियों में हुये परिवर्तनो से भारतीय इतिहास का यह स्वरूप निर्मित हुआ है। इसलिए आज का हमारा विषय यही है कि ऐसे कौन से कारक है? जिन्होने भारतीय इतिहास एवं संस्कृति और इसके समाज को रूप प्रदान किया है। इन कारको की पहचान कर विद्यार्थी न केवल इस विषय को बेहतर समझ सकते हैं वरन वे विषय को आसानी से हृदयंगम कर सकेंगें।

भारतीय इतिहास के क्रमानुसार विवेचन करने से हम पाते है कि भारतीय प्राकृतिक सीमाओ के भीतर हमें विभिन्न भाषा–भाषी नस्लो के आगमन का एक क्रम प्राप्त होता है। इनमें क्रमशः नेग्रेटो, आग्नेय या आस्ट्रिक, द्रणि और आर्यो का प्रसार क्रम प्राप्त होता है। इसी क्रम में इतिहास आदिम सभ्यता से नगरीय सैन्धक सभ्यता तथा वैदिक सभ्यता से होकर क्रमागत युग में प्रविष्ट होता है और यही से वैदिक सभ्यता कमियों और कुरीतियो की प्रतिक्रिया स्वरूप वृहत् व्यापी बौद्ध और जैन आन्दोलन घटित होते हैं। यही वह युग है जहां हम भारत में द्वितीय नगरीकरण का विकास तथा बड़े साम्राज्यीय राज्यो के प्रादुर्भाव को देखते है। आश्चर्यजनक रूप से विश्व में प्रथम गणतन्त्रीय शासन का स्वरूप भी यहीं हमारे समझ आता है। तदोपरान्त हम इतिहास मे मौर्य जैसे विशाल साम्राज्य से होते हुये गुप्त साम्राज्य तक के राजतंत्र के मध्य हमें पारसीक, यवन, कुषाण, हूण, शक आदि जातियो के आक्रमण से उनके भारतीय समाज में विलय के एक लम्बे घटनाक्रम के सम्पर्क में आते है।

7 वीं शताब्दी के बाद बड़े साम्राज्यो के विखण्डन का युग है तथा सामन्तवादी सोच का विकास, बड़े साम्राज्यो का छोटे–बड़े राज्यो के बीच टूटना राजपूत युग की मुख्य विशेषता है। यद्यपि इनमें उत्तर भारत में प्रतिहार, चाहमान, चन्देल आदि राजवंशो के शासन से कुछ समय के लिये पर्याप्त विस्तृत दृष्टि से उन्हे साम्राज्य की संज्ञा नही दी जा सकती। कमोन्वेश यही स्थिति दक्षिण भारत में चोल, चालुक्य, पल्लव, पाण्ड्व और राष्ट्रकूटों के लिये भी है।

इस्लामिक आक्रमण से लेकर गजनवी द्वारा उत्तर भारत की लूट, हिन्दू–मुस्लिम सम्बन्ध की स्थापना के साथ दिल्ली सल्तनत का प्रार्दुभाव, भारतीय राज्यो का पतन भी भारतीय इतिहास के पूर्व मध्यकाल की प्रमुखतम घटनाये है। दिल्ली सल्तनत का संघर्षपूर्ण युग और मुगलो के अपेक्षाकृत बेहतर राजतन्त्र के युग से जब हम है तो पाते हैं कि जो भी आक्रमणकारी शक्तियां है। वे चाहे चीन, मंगोलिया या कहीं से भी भारत मे आयी यहां आकर वे विजेता होने के बाद भी भारतीय समाज मे विलीन होकर यहां के समाज में आत्मसात कर ली गई। मुस्लिम यद्यपि विजेता की तरह रहे पर फिर भी साम्राज्य स्थापना के बाद वे भारतीय समाज का एक आवश्यक अंग हो गये। भारतीय समाज ने उन्हे कसमसाहट के साथ स्वीकार कर लिया तथा उन्होने भी भारत को अपना घर मान लिया। यही भारतीय समाज की विशेषता है कि यह हर परिस्थिति के अनुकूल लचीला होकर गतिमान बना रहता है।

यूरोपीय अंग्रेजो को छोड़कर कोई ऐसी बाह्य आक्रमणकारी जाति नही रही जो वापस अपने मूल स्थान को गयी हो। अन्य समस्त समूह न केवल यहां के समाज में समांगीकृत हो गये वरन् अब उनका अलग अस्तित्व भी पहचानना मुश्किल है।

भारतीय इतिहास पर प्रभाव डालने वाले कुछ तत्वो की चर्चा करते हुये हमें इसके सर्वप्रमुख भौगोलिक तत्व का विश्लेषण करना होगा–

<u>भौगोलिक तत्व</u>– इतिहास के जनक हेरोडोट्स ने कहा था कि इतिहास को सदैव भौगोलिक परिप्रेक्ष्य में समझना चाहिये अर्थात किसी विशेष भौगोलिक इकाई का इतिहास उसको भौगोलिक विशेषताओ से प्रेरित होता है। भारतीय इतिहास भी इससे परे नहीं हैं। भारतीय इतिहास के विकास और घटित घटनाओं को इसके भूगोल में आसानी से समझा जा सकता है।

जैसा कि हम भारतीय भूगोल को देखते हैं तो पाते है कि भारतीय प्रायद्वीप लगभग 2500 मील लम्बा और 2000 मील चौड़ा विस्तार है जिसमें मुख्यतः चार प्राकृतिक भाग दिखाई देते है–

1. उत्तर का पर्वतीय प्रदेश– इसमें गंगा और सिन्धु नदी तथा उसकी सहायक नदियों द्वारा पहाड़ो से लायी गयी महीन और उपजाउ मिट्टी से बना एक विस्तृत प्रदेश शामिल है जो पंजाब से लेकर बंगाल तक एक चौड़ी पट्टी के रूप में स्थित है। यह भारत ही नही वरन विश्व के सबसे उपजाऊ और समृद्ध प्रदेशो में शामिल है इसीलिये भारतीय इतिहास की अधिकतर घटनाये इसी प्रदेश पर अधिकार को लेकर घटी है।
2. दक्षिण का पठारी भाग– सामान्यतः दक्षिणी भारत के उत्तरी भाग को जिसे डेक्कन नाम से भी जाना जाता है इसकी पहचान है। इसमें नर्मदा से लेकर कृष्णा, तुंगभद्रा, आदि के बीच का भूभाग आता है जो आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र आदि राज्यो में स्थित है। यहां पर रायपूर दोआब जैसे उपजाऊ स्थल और खनिज क्षेत्र विद्यमान हैं इसलिये दक्षिण भारत के इतिहास इन्ही क्षेत्रो के अधिकार के लिये हुये संघर्ष की दास्तान है।
3. सुदूर दक्षिण प्रदेश– इस क्षेत्र मे कष्णा, कावेरी नदियो के उपजाऊ डेल्टा प्रदेश सम्मिलित है जो तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक आदि प्रदेशो में विस्तृत है। यह क्षेत्र मसालों, समुद्री उत्पादो आदि के लिये बहुत समय पूर्व से ही प्रसिद्ध रहा है। प्राचीन भारतीयों का विदेशी व्यापार सर्वाधिक इन्ही क्षेत्रो के उत्पादो से होता था। जब हम सम्पूर्ण भारत की भौगोलिक संरचना पर दृष्टि डालते हैं तो पाते है कि भारत तीन ओर से विशाल प्राकृतिक समुद्री सीमा से घिरा हुआ है जिसे हिन्द महासागर, बंगाल की खाड़ी और अरब सागर ने घेर रखा है। उत्तर की ओर लगभग 2400 किमी की सीमा हिमालय की पर्वत श्रेणीयो के द्वारा तैयार होती है। उत्तर पश्चिम में जहां भारतीय प्राकृतिक सीमा अफगानिस्तान तक पहुंचती है उस ओर हिन्दुकुश पर्वत की अपेक्षाकृत कम उंची श्रेणियां है। इस संरचना में भारतीय प्रायद्वीप में पहुंचने का मार्ग मात्र इन्ही श्रेणियों के मध्य विभिन्न नदियो के दर्रो जैसे गोमन,बोलन,खैल्र आदि से है। यद्यपि भारतीय प्रायद्वीप चारों ओर से घिरा होने के कारण अपना प्रथम अस्तित्व रखता है परन्तु सम्पूर्ण विश्व से यह पूरी तरह कटा हुआ भी नही हैं। 15वीं शती तक जब ता नौ चालन तथा समुद्री–परिवहन का अत्यधिक विकास नहीं हुआ तब तक भारत में प्रवेश करने के रास्ते मात्र उत्तर–पश्चिम के दर्रे ही थे। यही कारण है कि भारत में आने वाली जातियों और आकमणकारियो का आगमन मात्र इस तरफ से ही हो सकता था। फलस्वरूप भारतीयो का सम्पर्क अफीका, अमेरिका और पूर्वी एशिया/आस्ट्रेलिया की तुलना में यूरोप, मध्य एशिया व चीन मंगालिया के क्षेत्र से अधिक हुआ।

भारतीय समाज की संरचना मे इसका स्थवर दिखाई पड़ता है। भारतीय सामाजिक संरचना में आर्य–द्रविण समूह लगभग 96 प्रतिशत है और विभिन्न मान्यताओं के अनुसार यह समूह भारत मे इसी रास्ते से कैस्पियन सागर और भूमध्य सागर के तटीय क्षेत्रो से अनेक कारणों से विभिन्न काल–समयों में प्रविष्ट हुआ। कालान्तर में इनसे ही भारतीय जनता के सबसे बड़े वर्ग का निर्माण हुआ क्योकि इन्होने भारत के मूल निवासियो को पराजित कर उन्हे अपनी व्यवस्था में आत्मसात कर लिया। भारतीय इतिहास को प्राचीन काल से लेकर मध्यकाल तक जिन मुख्य आकमणो ने सर्वाधिक प्रभावित किया उनकी चर्चा आवश्यक है जो इस प्रकार है–

1 पारसीक 2 यवन 3 कुषाण या पून्ची 4 शक 5 हूण 6 मुस्लिम

इन सभी जातियो को भारत में प्रविष्ट होने का मार्ग उत्तर पश्चिम से मिला और इसी सम्मिलन से भारतीय इतिहास की ज्यादातर घटनायें घटित हुई हैं। विशेष बात यह है कि इन जातियो ने भारत में आने के बाद अधिकतर ने वापस जाने का निश्चय नही किया जिसका मुख्य कारण भारत की भौगोलिक विशेषता ही है। इन जातियो ने उत्तर भारत के उपजाऊ मैदानो पर अधिकार करके यहां अपना निवास स्थान बनाया। इन स्थानो पर धन धान्य खनिज और जंगली उत्पादो की पर्याप्त उपलब्धि थी। प्रयोग और परिवहन के लिये लगभग सभी क्षेत्रो मे नदियो में प्रवाहित होने वाला प्रचुर जल और मिली जुली जलवायु भी। इन्ही सबके कारण यहां आने पर इन्हे यह स्थान अपने मूल स्थानो की अपेक्षा श्रेष्ठ प्रतीत हुआ और विजेता होने के बाद भी वे इसे छोडने का मन नही बना सके वरन स्वयं यहां की सभ्यता और संस्कृति से तादात्म्य स्थापित कर रच–बस गये।

मुस्लिमो को छोडकर जिनका धर्म और प्रसार अपेक्षाकृत नवीन है अन्य जातियो के अलग अस्तित्व को अब खोजना भी सम्भव नहीं है वे सब भारतीय समाज में समांगीकृत हो चुके है।

दूसरी भौगोलिक विशेषताओ पर यदि नजर डाले तो भारत के उत्तरी मैदानी क्षेत्रो में विशाल कोयले और लोहे के खनिज भण्डार प्राप्त हुये है। जिसके कारण इस समृद्धशाली इलाके पर अधिकार को लेकर सर्वाधिक युद्ध हुये जिसका एक कारण लौह काल के बाद लोहे के हथियारो की आसान उपलब्धता भी रहा होगा। इसी क्षेत्र में जनसंख्या का सबसे अधिक घनत्व भी है और यही स्थिति दक्षिण भारत के सर्वाधिक उपजाऊ इलाके की भी है।

भारतवर्ष के इन क्षेत्रो में सब कुछ आसानी से सुलभ होने के कारण यहां के निवासियो को भारत से बाहर जाने की आवश्यकता भी महसूस नही हुयी जिसके कारण भारतीयो ने कभी भी बाहरी प्रदेशो पर आकमण कर साम्राज्य को बढाने का प्रयास नही किया। समृद्धि के साथ साथ व्यापार, शिक्षा, और कला संस्कृति का विकास भी तीव्र हो जाता है इसलिये प्राचीन भारतीय सभ्यता विश्व की अन्य समकालीन सभ्यताओं से तुलना मे अधिक समृद्धशाली मानी जाती है। प्राचीन भारतीय आर्यो

का उल्लासमय जीवन, सहअस्तित्व पर विश्वास तथा धार्मिक और सामाजिक सभ्यताओं पर इस भूगोल का स्पष्ट प्रभाव अनुभव किया जा सकता है।

भारतीय इतिहास और संस्कृति को प्रभावित करने वाला दूसरा अति महत्वपूर्ण तत्व है इसकी जनांकिकीय संरचना। यद्यपि यह प्रश्न अत्यन्त विवादास्पद है कि भारत में प्राचीन काल से किन किन जातियों का प्रादुर्भाव या आगमन हुआ, और उनके बीच किस प्रकार यह अन्तर्सम्बन्ध विकसित हुआ तदापि भारतीय जनता के संगठन को देखते हुये डा0 बी.एम. का मत नवीनतम तथा मान्य समझा जाता है जिसके अनुसार भारत में 6 आदिम जातियो का निवास था–

नेग्रेटो (Negreto) या नीग्रो, प्रोटो आस्ट्रेलाइड या आग्नेय/औक्ट्रिक, मंगोलियन या किरात, भूमध्य सागरीय या द्रविण, पश्चिमी ब्रेचीफेलस, नार्डिक या पंजाब, राजस्थान अथवा बंगाल के आर्य माना जाता है कि भारत मे सर्वप्रथम नीग्रो जाति का आगमन हुआ जो अरब ईरान के सहारे चलकर पश्चिम से अथवा सम्भवतः अफ्रीका से आये थे। इनकी एक शाखा आस्ट्रेलिया जाते हुये रास्ते मे इण्डोनेशिया, पालीनेशिया और मलेशिया में रह गयी। आज भी अण्डमान मे इनके कुछ निवासी निवास करते है। भारत में आर्यो के आगमन से पूर्व यह जाति या तो समाप्त हो गयी थी अथवा बाद में आने वाले औक्ट्रिक लोगो द्वारा या तो यह भारत से निष्कासित कर दी गयी अपना उस समय तक पट उनमें ही समाहित होकर यह अपना अस्तित्व समाप्त कर चुकी थी । यह जाति असभ्य पर साहसी रही होगी जो नावों की सहायता से समुद्रो का सैर करती थी। यद्यपि भारतीय संस्कृति पर इनके सीधे प्रभाव को नही समझा जा सकता तदापि शायद धनुष चलाने की कला इन्ही की देन है।

नेग्रेटो जाति के बाद हिन्दुस्तान की जनसंख्या का एक प्रमुख अंश औक्ट्रिक या आग्नेय जाति की देन है। इस जाति का मिश्रण भात में रहने वाली नीग्रो और मंगोलाइड जातियो से हुआ जिनसे आज काश्मीर से लेकर पूर्वी द्वीप समूहो तक पाये जाने वाले काले रंग के आदिवासियों की उत्पत्ति मानी जा सकती है। इनकी उत्पत्ति के विषय में कुछ भी ज्ञात न होने के बावजूद यह कहा जा सकता है कि भारतीय भाषा में अनेक ऐसे शब्द है जिनकी उत्पत्ति किसी न किसी रूप में औक्ट्रिक परिवार से हुयी मानी जाती है। अब इनमें कोल, मुण्डा भाषा–भाषी आदिवासी समूहो के साथ साथ गांवो के पास रहने वाली अनेक निम्न जातीय समुदाय जैसे डोम, भुइयां, मुसहर आदि के रूप मे पहचाना जाता है। इन्हे भारत में कोल भील की सामान्य संज्ञा दी जाती है। आर्य सर्वप्रथम इनसे सिन्धु की तराई में सम्पर्क मे आये और उन्होने इनके काले रंग और चपटी नाक होने के कारण इन्हे हंसी का पात्र भी समझा। आर्यो ने अपने साहित्य में कदाचित इन्हे अनास कृष्णवर्ण या निषाद के नाम से उल्लेखित किया था। सम्भवतः जो परम्परायें आर्य और द्रविण नहीं है वे इनकी ही है जैसे– पशुदेवता, नाग, गणेश, वाराह, मकर, आदि देवता, अवतार की उत्पत्ति, अण्डे से सृष्टि की कल्पना, पुनर्जन्म, सिन्दूर या गोदना प्रथा आदि।

भारत में रहने वाली जनसंख्या का लगभग 20 प्रतिशत भाग बड़े सिर, छोटे कद और चपटी नाक और काले रंग के भूमध्य सागरीय या द्रविण लोगो से मिलकर बना है मान्यतानुसार ये पूर्व में बलूचिस्तान और ईरान के इलाको में रहते थे। सम्भवतः नगरीय सैन्धव सभ्यता इन्ही की देन है। इन्होने सर्वप्रथम नदियो पर पुल और ऊँचे मंजिल से अधिक ऊँचे मकान बनाने की शुरूआत की। दक्षिण भारत के निवासी तमिल, कन्नड़, मलयालम और तेलगू भाषी द्रविण का समाज मातृसत्तात्मक है। भारतीय समाज मे सम्भवतः शिव और देवी की उपासला का प्रारम्भ इन्ही लोगों ने किया था। फल फूल, पत्र पुष्प, तथा जल आदि से पूजन की प्रणली सम्भवतः द्रविण ही है। भारत मे आर्यो का इनसे गहरा सम्पर्क हुआ और उन्होने इस जाति को अपने साहित्य में दस्यु या दास के रूप में उल्लिखित किया है। ये नौचालन तथा समुद्री परिवहन में प्रवीण थे जिसके कारण चोल में इन्होने श्रीलंका, इण्डोनेशिया तथा अन्य दक्षिण पूर्वी द्वीपो पर अपने साम्राज्य को स्थापित कर भारतीय संस्कृति को वृहत्तर बनाया।

भारत में रहने वाली लगभग 3 प्रतिशत आबादी मंगोलियन नस्ल की है जो सम्भवतः आर्यो के भारत आगमन से पूर्व ही पहाड़ी क्षेत्रो मे पूर्वोत्तर तक फैले हुये थे। आर्यो ने इन्हे किटा नाम से जाना है। सम्भवतः इस जाति की सबसे बड़ी देन शाक्तमत के विकास में है। काश्मीर के लद्दाखी, दार्जिलिंग के लपचा, असम के अक्का, मीरी, अबोट और मिश्मी, नेपाल के नेवार, किरन्ती और गोरखा किरात रक्त से सम्बन्ध रखते है। इन जातियो के अतिरिक्त भारतीय जनसंख्या का सबसे बड़ा समाज आर्यो से मिलकर बना है जो प्रारम्भ में सिन्धु नदी की सहायक नदियों से लेकर गंगा के क्षेत्र तक विस्तृत थे। कालान्तर में इन्होने भारत के अन्य निवासियों को सुदूर दक्षिण में सीमित कर दिया। भारतीय समाज, संस्कृति, कला, धर्म, भाषा, संस्कार आदि इसी जाति की मुख्य देन माने जाते है। इन्होने भारत के अन्य निवासियो को अपने भीतर जगह देते हुये स्वयं में समाहित कर लिया यही कारण है कि आज भारतीय समाज में उन जातियो को पहचानना प्रायः असम्भव हो गया है। वैवाहिक सम्बन्धो तथा वर्ण संकर सन्तानोत्पत्ति के कारण भारतीय समाज में वर्ण के भीतर अनेक जातियो की उत्पत्ति हुयी जिनके अपने अपने कार्यो का निर्धारण किया गया। इसी सम्मिश्रण के कारण भारतीय समाज एक सहिष्णु समाज के रूप में विकसित हुआ। जिसने कालान्तर में आने वाली यवन, शक, यूची, हूण आदि जातियो को अपने भीतर समाविष्ट कर लिया और उन्हे भारतीय समाज का एक आवश्यक अंग बना दिया। यही कारण है कि भारत में आने वाली आकमणकारी जातियो को भारतीय समाज के भीतर बिना किसी भारी प्रतिरोध के यथायोग्य सम्मानजनक स्थान प्राप्त हो गया।

इस प्रकार हम देखते है कि भारत में एक ओर जहां ऊँचे ऊँचे पर्वत वहीं दूसरी ओर गहरे महासागर, एक ओर उपजाऊ मैदान वहीं दूसरी ओर विशाल रेगिस्तान और पठार भी है। एक साथ ही घने वन और एकान्त घाटियां है वही दूसरी ओर अत्यन्त शीतल और अत्यन्त उष्ण स्थान भी है। यहां प्राचीन समय से ही भिन्न भिन्न जाति, भाषा, धर्म, वेश भूषा तथा आचार विचार के लोग निवास करते है। इसलिये सामान्य तौर पर भारत में अनेकता दृष्टिगोचर होती है। परन्तु इन वाह्य विभिन्नताओं के मध्य एक गहरी आन्तरिक एकता भी है जो विभिन्नता में एकता की भारतीय संस्कृति को स्थापित करती है। समान प्राकृतिक सीमा यहां के निवासियो में समान मातृभूमि के राजनैतिक और वैचारिक सिद्धान्त दृष्टिगोचर होता है। भारत की सांस्कृतिक एकता अधिक सुस्पष्ट है जिसके कारक भाषा, साहित्य, सामाजिक तथा धार्मिक आदर्श है। महाकाव्यो, पुराणों, परम्पराओं और धार्मिक रीति रिवाजो की स्वीकार्यता लगभग पूरे देश में एक जैसी है। विष्णु पुराण में कहा गया है कि समुद्र के उत्तर और हिमालय के दक्षिण में जो भू–भाग अवस्थित है उसे भारत कहा जाता है और जिसकी सन्ताने भारती है। वहीं कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र में हिमालय से लेकर समुद्रपर्यन्त प्रदेश के हजार योजन क्षेत्र के विस्तार को चक्रवर्ती राज्य का शासन क्षेत्र माना गया है। यही भारतीय चक्रवर्ती साम्राज्य की सार्वभौमिक अवधारणा रही है। धार्मिक भावनाओं और विश्वासो में यह एकता पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण पर स्पष्ट दिखाई देती है। यहां की सात पवित्र नदियां गंगा, यमुना, सरस्वती, नर्मदा, गोदावरी, सिन्धु, तथा कावेरी, सात पर्वत महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान, ऋक्ष्य, विन्ध्य तथा पारिपाल तथा सात नगरियां अयोध्या, मथुरा, कांची, अवन्ति, पुरी और हारावती देश के विभिन्न भागो में स्थित हैं तथा सभी निवासियो के लिये समान रूप से पवित्र और पूज्य हैं।

वेद, पूराण, महाभारत, रामायण, उपनिषद आदि ग्रन्थ सर्वत्र सम्मान्य हैं तथा शिव और विष्णु जैसे देवताओ की उपासना पूरे देश में होती है। धर्मशास्त्रो में प्रतिपारित व्यवस्था सभी जगह मान्य रही है और वर्णाश्रम पुरूषार्थ आदि सभी समाजो के आदर्श रहें हैं। यहां की लगभग सभी मुख्य भाषायें संस्कृत या तमिल मूल की हैं जो शिव के उमस से निसृत मानी जाती है इन भाषाओं में भी आपसी सांस्कृतिक एकता के प्रचुर दर्शन होते हैं। भारत के तीर्थस्थान भारतीय समाज की एकता में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं जिनमें चारो दिशाओ में स्थित चारधामो का विशेष महत्व है।

भारतीय इतिहास के प्रमुख अवसरो में आर्यो के भारत आगमन और आर्येन्तर जातियो से उनके सम्पर्क से होने वाले परिवर्तनो, विकास सातत्य से नयी भारतीय संस्कृति का उदय होता है। इन्ही में काप्र कर्मकाण्डीय कुरीतियो के विरूद्ध उपनिषदीय चिन्तन धारा से प्रेरित बौद्ध और जैन विद्रोह से अपेक्षाकृत अधिक सहिष्णु, विचारशील तथा तार्किक सामाजिक चिन्तन का निर्माण भी भारतीय संस्कृति की एक विशेष परिघटना है। इस्लामिक विजेताओ के धर्म के रूप मे भारत में पहुंचना और राजनैतिक विजय के बाद भी भारत मे इस्लामिक उदारवाद अर्थात सूफी विचारधारा का प्रसार भारतीय संस्कृति से इस्लाम पर पड़ा एक विशेष प्रभाव है।

भारतीय इतिहास की तीव्र परिघटनाओं में दो तत्वो की प्रधानता दिखाई पड़ती है वह हैं परिवर्तन और सातत्य। जहां बड़े आकमण या किसी बड़ी घटना से हमें उपरी सतह पर तीव्र परिवर्तन दिखाई देता है वहीं भीतर कहीं गहरें में एक निरन्तरता चलती रहती है जो भारतीय संस्कृति और समाज के सातत्य अर्थात धीमी परन्तु लगातार गति से विकास को दर्शाती है।

जहां पूर्वकाल में हमारे विचार उदार और सहिष्णु थे वही कालान्तर मे हमारी सोच का दायरा सीमित और संकीर्ण होने लगा जिससे भारतीय समाज में कठोर जातिप्रथा तथा अलगाववाद की भावना ने जन्म लिया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतीय इतिहास का स्वरूप इसलिये ऐसा है क्योंकि इसका भूगोल, जनांकिकी, सामाजिक, और धार्मिक मान्यतायें इसे चारो ओर से आबद्ध कर इसमें चल रहे परिवर्तनों के बावजूद इसकी एक चिन्तनधारा और विकास को निर्देशित करतें हैं। ऐसी स्थिति में भारतीय इतिहास का यह स्वरूप आश्चर्यजनक न होकर पूर्वनिर्धारित सा प्रतीत होता है।